Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Humanity
ISSN: 2279-0233
Continuous issue-23 | April – May 2016

केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में श्रम-सौन्दर्य

कवि केदारजी श्रम के पुजारी तथा श्रमिकों के भक्त हैं. उनकी कविता में खेत- मजूर से लेकर फैक्ट्री मजूर तक श्रमिक के अनेक रूप दिखाई देते हैं. विभिन्न अवस्थाओं में जिनमें गरीबी के नग्न चित्रों से लेकर उनके कठिन जीवन संघर्ष , विद्रोह , परिवर्तन की आकांक्षा आदि शामिल है, इन सभी में केदार मजदूरों को देखते – दिखाते हैं। इसलिए उनके काव्य में श्रमिक जीवन अपनी सम्पूर्णता के साथ उपस्थित हो जाता है। उनकी कविता का किसान ,लुहार और मेहनतकश कोई पुरातनपंथी आदमी नहीं, बदल रहे ज़माने का नया मनुष्य है. यह नया मनुष्य अपने अधिकारों को जानता है, उनको छीन लेने की हिम्मत भी रखता है। केदारजी इसी मनुष्य की पूजा करते हैं। वास्तव में केदारजी का काव्य ही सही मायने में श्रम का काव्य है। डॉ. रामविलास शर्मा ने केदार के बारे में लिखा है-

"केदार ने श्रम करते हुए मनुष्यों पर जितना लिखा है उतना हिंदी के बहुत कम कवियों ने लिखा होगा।
प्रगतिशील कविता जहाँ व्यक्तिवाद के दायरे में बंद न होगी, वहाँ श्रम की ओर उन्मुख होगी ही।"1

'फूल नहीं रंग बोलते हैं', संकलन में कवि की ऐसी कई कविताएँ संकलित है जो कवि के श्रम के प्रति आस्था का प्रतिनिधित्व करती है। इन कविताओं में से 'घर जन', 'कानपुर', 'मोर्चे पर', 'हथोड़े का गीत', 'तेजधार का कर्मठ पानी', 'मैंने उसकों हल चलाते देखा है', 'आँख खुली' आदि ऐसी कविताएँ हैं जिनमें कवि श्रम के गीत गाता है और श्रमिकों की सत्ता स्थापित करता हुआ नजर आता है।

श्रमिक के रूप में केदारजी को किसान और लुहार को देखना कुछ ज्यादा ही प्रिय रहा है। खेत में मजूर के रूप में किसान जी तोड़ मेहनत करता हैं। न वह गर्मी की परवाह करता है, न सर्दी या बरसात की । उसके पास न तो दिन होता है और न ही रात अगर कुछ होता है तो वह है केवल श्रम। इस श्रमिक किसान का एक सजीव चित्र कवि ने इस प्रकार से खीचा है-

" आदमी का बेटा/गर्मी की धूप में भाँजता है फडुवा
हड्डी को, देह को तोड़ता है/ खूब गहरे से धरती को खोदता है
कांखता है, हांफता है, मिट्टी को ढोता है
गन्दी नाली की आबादी को पाटता है॥"2

किसान मात्र श्रम करना जानता है, वह श्रम के भेद को नहीं मानता और न ही किसी काम को छोटा या बड़ा मानता है, यही कारण है कि गन्दी नाली के आबादी को पाटने में उसे जरा भी घिन नहीं आती, लेकिन इके बावजूद भी उसे अपने श्रम का उचित पारिश्रमिक नहीं मिलता फलतः वह दिन-ब-दिन आर्थिक रूप से टूटता जाता है वह अपनी पीढ़ी को मात्र गरीबी और अभावों से भरी जिन्दगी ही दे पाता है। उसके श्रम का फल जमीदार तथा अन्य शोषक वर्ग भोगते हैं और बदले में उसे मिलता है कर्ज जिसकी वह कभी भरपाई नहीं कर पाता। दिन-रात मेहनत करने के बात वह विरासत में जो कुछ अपनी संतानों को देता है, उसका ह्रदय को छलनी कर दे, ऐसा वर्णन कवि ने 'पैतृक सम्पत्ति' कविता में इस प्रकार से किया है-

"जब बाप मरा तब यह पाया/ बूढ़े किसान के बेटे ने
घर का मलबा , टूटी खटिया / कुछ हाथ भूमि- वही भी परती
बनिया के रुपयों का कर्जा / जो नहीं चुकाने पर भी चुकता
दीमक, गोजर, मच्छर , मटा / ये हजार सब सहवासी
बस यही नहीं, जो भूख मिली/ सौ गुनी बाप से अधिक मिली।"3

किसानों की तरह श्रम करने वाला एक दूसरा वर्ग भी है-मजदुर वर्ग। यह बेचारा फैक्ट्रियों में दिन- रात एक कर मशीनों के साथ कन्धा से कन्धा मिलकर काम करता है , लेकिन इसको वह सब नहीं प्राप्त होता जो इसे इसकी मेहनत के प्रमाण में मिलना चाहिए, उचित मेहनताना के अभाव के कारण इनका जीवन स्तर निम्न से निम्नतर होता जा रहा है, न तो इनके पास छत है और न ही खाने के लिये अच्छा भोजन, बच्चो की शिक्षा तथा उज्जवल भविष्य के लिये इनके पास कोई रास्ता नहीं होता, जिसका परिणाम यह आता है कि इनके बच्चे भी मजदूर बन कर अपना भविष्य मशीनों के साथ बनाते हैं जहाँ मात्र उनका खून ही जलाता है।

'घन–गरजे' कविता में कवि ने श्रम के महत्व को प्रतिपादित करते हुये बताया है कि घन की मार के सामने बड़ी से फौलादी चट्टाने क्षण भर में ही चूर हो जाती है। घन प्रतीक है श्रमिकों के कठोर श्रम का और गर्जना प्रतीक है विद्रोह का। जब श्रम विद्रोह पर उतर आता है तब उसके सामने दुनिया की कोई भी शक्ति टिक नहीं पाती। कवि कहता है-

"घन गरजे जन गरजे
बंदी सागर को लख कातर/ एक शेष से
घन गरजे जन गरजे
देख नाश का तांडव बर्बर/ एक बोध से
घन गरजे जन गरजे"4

कवि श्रमिक को उनकी शक्ति एवं श्रम के महत्व का अहसास दिलाता है और उन्हें बताता है कि दुनिया तुमसे है, तुम दुनिया से नहीं, तुम्हारे द्वारा दिए गए श्रम के कारण ही पूंजीपति वर्ग विविध भोगों को भोग रहा है। उसकी आलीशान कोठी, वेश्यालय, क्लब आदि मनोरंज के निर्माता तुम हो । 'कानपुर' कविता में वे कहते हैं-

"घाट , धर्मशाले, अदालते
विद्यालय , वेश्यालय सारे
होटल, दफ्तर, बूचड़खाने
मंदिर , मस्जिद, हाट , सिनेमा
श्रमजीवी की उस हड्डी से
टिके हुये हैं – जिसे समाज ने
टेढ़ी करके मोड़ दिया है
कानपपुर की सारी सत्ता
श्रमजीवी की ही सत्ता है
कानपुर की सारी माया
श्रमजीवी की ही माया हैं.".5

श्रमजीवी की सारी सता होने के बावजूद भी उसकी कमर को तथाकथित सभ्य आदमी के समाज ने इस असभ्य श्रमजीवी की हड्डी को टेढ़ी करके मोड़ दिया है ताकि वह गलती से भी अपनी बनाई हुई कृति को न देख सके। लेकिन कवि उन्हें निराश नहीं होने देता। वह उनके अन्दर आशा की नई किरणों का संचार कर उन्हें उनका सामना करने को कहता है। वह उनके साथ मोर्चे पर प्रतिक्षण रहकर उनका साथ देता है -

" मैं लड़ाई लड़ रहा हूँ मोरचे पर
लेखनी की शक्तिशाली गर्जना ले
मैं कलेजा शोषकों का फाड़ता हूँ/ सूदखोरों को,
मिलों के पैशाचिकों को
भूमि को हडपे हुये धरणीधरों को
मैं प्रलय के साम्यवादी आक्रमण से मारता हूँ
और उनके अपहरण की
दिग्विजयिनी सभ्यता को
सर्वहारा की नवोदित सभ्यता से जीतता हूँ ।"6

नवोदित सभ्यता उन लोगों की है जो श्रम के बल पर अपने अस्तित्व को बनाये रखने के पक्ष में हैं। कवि इसी सभ्यता को अपना प्रक्षेपास्त्र बनाकर शोषक समाज पर आक्रमण करता है । सर्वहारा वर्ग ही कवि की ताकत है और वह इसी के प्रति पूर्ण समर्पण करने के लिए प्रतिबद्ध है । कवि इनको दुनिया को सर्वश्रेष्ट शक्ति मनाता है। उन्हें हर प्रकार के बन्धनों को तोड़ डालने के लिए कहता है-

" मार हथोडा / कर कर चोट
लोहू और पसीने से ही
बंधने को दीवारें तोड़
मार हथोडा कर कर चोट
दुनिया की जाती ताकत हो,
जल्दी छवि से नाता जोड़"।7

कवि ने हमेशा ही इस शक्ति को श्रम की भट्ठी पर तपते हुए और एक नये रूप में निकलती गोली की तरह चलते हुए देखा-

"मैंने उसको/ जब-जब देखा,
लोहा देखा/लोहा जैसा
तपते देखा/ गलते देखा/ ढलते देखा
मैंने उसको
गोली जैसा/ चलते देखा।"8

कवि ने इस कविता में श्रमिक की तुलना तपकर गलते हुए लोहे से की है जो गलकर गोली बन जाता है और गोली की तरह चलकर शोषकों एवं अत्याचारियों का दमन करता है। श्रमिक दिन रात श्रम की भट्ठी में जलता हैं लेकिन जब उसका हक़ उससे छीना जाता है या छीनने की कोशिश की जाती हैं तो वही उसी भट्ठी में से गोली बनकर भी निकल सकता है। एक अन्य कविता में इनको अकर्मण्यता से कर्म की ओर ले जाने की बात करते हैं। वे कहते हैं कि जन हाथों में कठोर श्रम करने की शक्ति न हो , उसे टूट ही जाना चाहिये-

"हाथ जो/ चट्टान को तोड़े नहीं
वह टूट जाये / लौह को/मोड नहीं
सौ तार को / जोड़े नहीं/ वह टूट जाये।"9

केदारनाथजी कर्मशील व्यक्ति को ही सही मायने में श्रमिक मानते हैं जो ईमानदारी से अपने श्रम-कर्म का निर्वाह करते हैं और समाज के लिए उपयोगी बनते हैं। इनके बारे में वे कहते हैं-

" मैं हूँ अनास्था पर लिखा आस्था का शिलालेख
नितांत मौन/ किन्तु सार्थक और सजीव
कर्म के कर्तृत्व की सूर्याभिमुखी अभिव्यक्ति
मृत्यु पर जीवन के जय की घोषणा।"10

कवि का यह श्रमिक ही मृत्यु पर विजय प्राप्त कर जीवन का गुणगान कर सकता हैं, क्योकि उसके पास संसार की वे अनमोल खुशियों है जो अन्य किसी के पास भी नहीं है और वे खुशिया उसे श्रम के द्वरा प्राप्त होती हैं जिन्हें कोई दूसरा धन आदि भौतिक साधनों के द्वारा खरीद नहीं सकता ।

केदारनाथ जी श्रम के अन्यतम पुजारी हैं। वे अपनी इस पूजा- आराधना के द्वारा श्रमिकों की हालातों को बदलना चाहते हैं और इसके लिये वे कविता को अपना माध्यम बनाते हैं। मधुछंदा ने उनके बारे में ठीक ही लिखा है -

" केदारनाथ शोषण ग्रस्त श्रमिक जीवन की वास्तविकता की परतें अपनी कविता में उघाडते हैं।
उनके लिये श्रम सूर्य के समान ही प्रखर होता है जो लोक को प्रलोकित करता है।"11

केदारनाथ जी इस मान्यता का प्रबल विरोध करते हैं कि जनता के सुख- दुःख का कारण पूर्व जन्म का परिणाम हैं। मेहनत करने पर भी खाने भर को न मिलने पर उसे कहा जाता कि यह सब पूर्व जन्म के पापों के कारण है। वे इसके विरोध में नया जीवन- दर्शन ले कर आते हैं। **'श्रम कभी व्यर्थ नहीं जाता और श्रम करने वाले लोग इस व्यवस्था को बदलेगें।12** केदारजी 'गुलमेंहदी' संकलन में कहते हैं-

" खो सकता है/ मेरा तेरा/ रत्ती –रत्ती जोड़ा सोना/हो सकता हैं/
पूर्ण असम्भव/ का भी पूरा संभव होना/ किन्तु नहीं श्रम/
मेरा तेरा/ इन हाथों का खो सकता हैं/ इनके द्वारा/
कर्म असंभव/ पूरा संभव हो सकता है।"13

केदार अपने आप को श्रमजीवियों का वकील मानते हैं और उनके लिए ही अपने जीवन को समर्पित करने के लिए कटिबद्ध बताते हैं। वे जानते हैं कि यह आसान काम नहीं है बल्कि आग पर चलने की राह है-

" मैं हूँ
आग और बर्फ की वसीयत
मौत जिसे पायेगी
जीवन से लिखी"14

कवि केदार ने यद्यपि प्रेम और सौंदर्य की कवितायें भी लिखी है परंतु उन्हे वास्तविक सौंदर्य की अनुभूति श्रम करते हुये श्रमिकों पर ही हुयी है। वे किसी नायिका के नख-शिख सौन्दर्य का वर्णन नहीं करते अपितु फावड़ा और कुदाल लिए हुये किसान और मजदूर युवक और युवती के सौन्दर्य का वर्णन अपनी कविताओं में करते हैं और इसके साथ ही उन्हें अपने अधिकारों के प्रति सचेत भी करते हैं। केदार प्रगतिवाद की विचारधारा को अपनी कविताओं में रखते जरूर हैं पर भारतीय परिवेश को ध्यान में रखते हुये। उनका पूरा काव्य ही श्रम के सौंदर्य को समर्पित है। उनकी कवितायें एक वर्ग विशेष की आवाज को उठती हैं और लोगो का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती हैं। उनकी कविताओं में युग की ध्वनि साफ परिलक्षित होती है जिसमें कहीं न कहीं क्रांति और विरोध के स्वर छिपे हुये हैं और यही स्वर आगे चलकर एक समुदाय विशेष को प्रेरणा शक्ति देने का काम भी करती है। अतः यह कहा जा सकता है कि केदार के काव्य में परंपरागत सौंदर्य चित्रण न होकर श्रम जनित सौंदर्य का चित्रण हुआ है। सही अर्थों में केदार इसी सौंदर्य के उपासक भी रहें हैं।

संदर्भ:

1. रामविलास शर्मा प्रगतिशील काव्य धारा और केदारनाथ अग्रवाल :पृ ,49
2. केदारनाथ अग्रवाल :गुलमेहंदी पृ ,28
3. केदारनाथ अग्रवाल :फूल नहीं राग बोलते हैं पृ ,74
4. केदारनाथ अग्रवाल :फूल नहीं राग बोलते हैं पृ ,23
5. केदारनाथ अग्रवाल :फूल नहीं राग बोलते हैं पृ ,72
6. केदारनाथ अग्रवाल :फूल नहीं राग बोलते हैं पृ ,77-78
7. केदारनाथ अग्रवाल :फूल नहीं राग बोलते हैं पृ ,83
8. केदारनाथ अग्रवाल :फूल नहीं राग बोलते हैं पृ ,98
9. केदारनाथ अग्रवाल :फूल नहीं राग बोलते हैं पृ ,82
10. केदारनाथ अग्रवाल :फूल नहीं राग बोलते हैं पृ ,148
11. डॉ॰ मधुछन्दा श्रम का सौन्दर्य शास्त्र और केदारनाथ अग्रवाल का काव्य :पृ ,114
12. रामविलास शर्मा प्रगतिशील काव्य धारा और केदारनाथ अग्रवाल :पृ ,40
13. केदारनाथ अग्रवाल :गुलमेहंदी पृ ,34
14. केदारनाथ अग्रवाल :फूल नहीं राग बोलते हैं पृ ,147

****

प्रेम नारायण,

शोधार्थी-हिन्दी विभाग,

गुजरात यूनिवर्सिटी ।

Copyright © 2012- 2016 KCG. All Rights Reserved. | Powered By : Knowledge Consortium of Gujarat